आनंद का एक साल

✍ वर्षा

वैसे तो शिक्षा में बदलाव और नवाचार की बहुत बातें होती हैं, लेकिन प्रयास गिने–चुने ही होते हैं। इस विमर्श में यह बात भी कई बार कही जाती है कि बच्चे क्या पढ़ें और कैसे पढ़ें–इसे तय करते समय उनकी भागीदारी भी होनी चाहिए। भोपाल में लगभग दो वर्ष पहले आनंद निकेतन नाम से एक स्कूल आरंभ हुआ है। इसके संचालक प्रमोद मैथिल कहते हैं, 'हमारी यह आकांक्षा है कि जीवन के सभी पहलुओं में बच्चों को निर्भयता, शांतिमय एवं अवसरग्राही वातावरण मिले। हम एक ऐसे स्कूल की कल्पना को साकार करना चाहते हैं, जो आम स्कूल की अवधारणा से कुछ बातों में भिन्न हो।' इस अभिनव स्कूल में लेखिका ने एक शिक्षिका के तौर पर एक साल बिताया है। उन्होंने वहां जो देखा और महसूस किया उसे वे हमारे साथ साझा कर रही हैं।

जुलाई की रिमझिम बारिश का मौसम था। तेज बारिश निकल चुकी थी। हल्की फुहारें पड़ रही थीं। पूरा भोपाल गीला–गीला और सीला–सीला सा हो रहा था। चारों तरफ हरियाली। मौसम ठंडा और सुहावना था। ऐसे ही मौसम में मैं और मेरी एक दोस्त बस से उतर कर लगभग एक–सवा एक किलोमीटर टहलते हुए आनंद निकेतन स्कूल पहुंचे। स्कूल के संचालक प्रमोद से पहले ही फोन पर मिलने का तय कर लिया था। स्कूल पहुंचने पर प्रमोद ने मुस्कान के साथ हमारा स्वागत किया। फिर शुरू हुई बातचीत। सैकड़ों बार कही जा चुकी बातें उन्होंने फिर से एकदम नए अंदाज में कहनी शुरू कीं। हम मन में कुछ संदेह लेकर लेकिन पूरी रुचि के साथ उनकी बातें सुन रहे थे। कुछ सवाल भी दाग दिए। उन्होंने बहुत धैर्य से हमारे सवालों के जवाब दिए। इसके बाद उन्होंने हमें स्कूल का भ्रमण कराया। हरेक कमरे में ले गए।



विभिन्न निजी स्कूलों में पढ़ाने का मेरा अनुभव भयावह रहा है। कक्षा लेते वक्त पीछे की खिड़की के पास खड़े होकर प्रिंसिपल चुपके से सुनते थे कि टीचर क्या, कैसे पढ़ा रहे हैं। पंक्ति दर पंक्ति कॉपी चेक करना। कोई चूक होने पर अपमानित होना। नाम मात्र के वेतन में से भी आए दिन कुछ काट लेना।

खैर, आनंद निकेतन स्कूल आने के बाद बच्चे एक बार फिर मुझे आवाज देने लगे। बच्चों के बीच में रहना मेरी कमजोरी है। मैंने वादा किया कि मैं सितंबर से नियमित स्कूल आना शुरू करूंगी और स्कूल में पार्ट टाइम संगीत सिखाऊंगी।

आनंद सीखने और सिखाने का

मैं 1 सितम्बर 2012 से नियमित स्कूल आने लगी।संगीत से जीवन का ऐसा नाता था जो कभी नहीं छूटा। लेकिन

अब तक संगीत केवल सुनने और गुनगुनाने तक ही सीमित था। कभी–कभी दोस्तों के साथ महफिलें भी हो जाया करती थीं बस।

आनंद निकेतन स्कूल में बच्चों के बीच में रहने के लालच और यहां कुछ रचनात्मक करने के सुकून के साथ मैंने बच्चों को संगीत सिखाना शुरू किया। मैंने पहले कभी नहीं सोचा था कि मैं संगीत सिखाऊंगी। लेकिन यहां के अनौपचारिक माहौल में मुझे अपने मन से कक्षा में कुछ भी करने की छूट थी। यहां बच्चे 3 से 11 साल के बीच की उम्र के थे। मेरे मन में बच्चों को संगीत सिखाने का कोई पहले से मौजूद खाका नहीं था। बच्चों में अच्छा संगीत सुनने और समझने, गुनगुनाने की समझ विकसित हो, बस यही सोच कर यह काम शुरू किया।



पहले बच्चों को कुछ मधुर धुनें सुनाईं। कुछ गाकर, कुछ कंप्यूटर पर सुनाकर। बच्चे जो गीत पसंद करते उसे हम बार–बार गाते। धीरे–धीरे बच्चों को गाने का चस्का लग गया। अब स्कूल में बच्चे विभिन्न भाषाओं में गीत गाते हैं। उनके गीतों का दायरा इतना बड़ा है कि वे 'कौव्वों की कांय–कांय, चिड़ियों का हल्ला....' 'गुड़िया की अंखियों में निंदिया भरी है.....' जैसे बालगीतों से लेकर, फिल्मी गीत (ओह रे ताल मिले नदी के जल में.....इक दिन बिक जाएगा, ये कौन चित्रकार है.....ईचक दाना बीचक दाना....मधुबन खुशबू देता है... अपने लिए जिए तो क्या जिए....मेरा रंग दे बसंती चोला......ये सन्नाटा तोड़ के आ......) और जनगीत से लेकर विभिन्न भाषाओं के गीत, लोकगीत और शास्त्रीय संगीत में सरगम और राग देश तक बहुत रुचि लेकर गाते हैं। पिछले एक साल में शायद दो या तीन बार ऐसा हुआ होगा जब बच्चों ने संगीत की कक्षा में आने के बारे में न सोचा हो। कक्षा में उनकी नियमितता ने संगीत में मुझे भी नियमित रखा है और बच्चों को रोज नई चीजें सिखाने के क्रम में स्वयं भी रोज नई चीजें सीख रही हूं। यहां बच्चे कविताओं की धुन भी बनाते हैं और कुछ गीतों को आगे भी बढ़ाते हैं। जैसे 'सूरज दादा आसमान से फेंके गोले गरम गरम' गीत को बच्चों ने खुद कोशिश करके आगे बढ़ाया। इस तरह संगीत की कक्षा यहां केवल संगीत की कक्षा नहीं रह गई है। यह कक्षा भाषा की कक्षा में भी तब्दील हो जाती है कभी–कभी।

एक दिन 'मेरा रंग दे बसंती चोला.....' गीत सीखते वक्त संगीत की कक्षा सामाजिक विज्ञान की कक्षा में तब्दील हो गई। बच्चों को भगतसिंह के बारे में बताया। छोटे–छोटे बच्चे भगतसिंह के फांसी के तख्ते पर झूल जाने के पीछे का पूरा इतिहास भले ही न समझ पाएं हों लेकिन वे उनकी कुर्बानी के जज्बे का अहसास कर पा रहे थे और वे नन्हें–नन्हें बच्चे फांसी के वक्त उन्हें हुए दर्द को महसूस कर पा रहे थे। बच्चों के अहसास के इस स्तर ने मुझे अतीत के प्रति और भी संवेदनशील कर दिया।

मैं जब स्कूल में आई तो बच्चे एक नाटक तैयार कर रहे थे, 'अंगुलिमाल'। नाटक भी मेरी रुचि का विषय रहा है। मैं भी उससे जुड़ गई। बच्चों को नाटक में इतनी अधिक रुचि थी कि कई बार वे अन्य विषय पढ़ना ही नहीं चाहते थे। स्कूल की चिंता भी इस बात को लेकर नहीं थी कि बच्चे विषय विशेष को क्यों नहीं पढ़ रहे। क्योंकि प्रकारांतर से नाटक स्वयं में एक शिक्षणशास्त्र का विषय है। बच्चे नाटक के माध्यम से केवल अभिनय या नाटक से जुड़ी चीजें ही नहीं सीख रहे थे। बच्चे नाटक में भाषा सीख रहे थे। संवाद याद करने से उनके शब्दकोश में इजाफा हो रहा था। नाटक अंगुलिमाल पर था, इसलिए बच्चे अतीत में भी झांक रहे थे। बुद्ध के विषय में भी जानकारी हासिल कर रहे थे। बुद्ध के बारे में उनके कई बालसुलभ सवाल थे। मसलन बुद्ध अब से कितने समय पहले पैदा हुए थे। उनके मन में इतनी करुणा क्यों थी? नाटक की तैयारी के दौरान ही उस समय की

वेशभूषा को जानने के लिए हमने सीरियल 'भारत एक खोज' से बुद्धकालीन भारत और मौर्य कालीन भारत की सीडी उन्हें दिखाई। इससे बच्चों को उस समय के भारत को विजुअलाइज करने का अवसर भी मिला। इसके अलावा नाटक की प्रापर्टीज आदि की तैयारी में बच्चे और हम सभी लगे। जैसे विभिन्न मुखौटे तैयार करना, अंगुलिमाल की उंगलियों की माला तैयार करना, उसकी तलवार तैयार करना। विभिन्न पोषाकों पर बात करना, उनका इंतजाम करना। इन सबमें बच्चे पूरी तरह से शामिल थे। इस तरह नाटक की इस तैयारी में कई विषय शामिल थे। कला और क्राफ्ट तो थे ही, साथ में संगीत तो उसका अभिन्न अंग था। यहां बच्चे नाटक के माध्यम से बहुत कुछ और खुशी–खुशी सीख रहे थे। उन पर कुछ भी थोपा हुआ नहीं था।

नाटक तैयार हो चुका था। नाटक की प्रस्तुति होनी थी। इत्तफाक से उसी वक्त आनंद निकेतन स्कूल के संरक्षक श्री कमल मंगल का स्कूल में आना तय हुआ। हमने उसी समय अभिभावक कार्यशाला आयोजित करना तय किया। साथ ही यह भी निश्चित किया कि उसी में छोटा सा सांस्कृतिक कार्यक्रम अभिभावकों के सामने पेश किया जाए। नाटक भी इसमें हो। बच्चों समेत हम सभी इस कार्यक्रम की तैयारी में जुट गए। बच्चों ने ही पूरे स्कूल की साफ–सफाई की और उसे सजाया। इन सारी तैयारियों को देखकर यह लगा कि बच्चों का अपने इस स्कूल से कितना गहरा लगाव है।



हर दिन का आनंद

इस स्कूल में घंटी बजने का चक्कर ही नहीं। बच्चे अपने हिसाब से स्कूल के समय को बांटते हैं। सुबह 9 बजे आकर बच्चे हल्का–फुल्का व्यायाम करने के बाद अंदर हॉल में इकट्ठे होते हैं। फिर बच्चों में होड़ लगती है कि कौन भागकर ऊपर म्यूजिक रूम से ढपली लेकर आएगा। जिसके हाथ पहले ढपली लगी, वह उसे लेकर आ जाता है। फिर शुरू होता है गीत–संगीत का सत्र। लगभग आधे घंटे तक बच्चे अपने मन–पसंद गीत गाते हैं। उसके बाद होता है पोडियम टाइम।

पोडियम एक ऐसी गतिविधि है जहां बच्चे याद करके बताते हैं कि पिछले दिन उन्होंने स्कूल में क्या–क्या मजेदार किया था और स्कूल के बाद भी कुछ मजेदार किया तो वे उसे भी बताते हैं। यह गतिविधि बहुत रोचक होती है। मैंने देखा कि यहां पिछले साल भर में बच्चों ने बहुत आत्मविश्वास हासिल किया। यहां बच्चों की भाषा विकसित होती है, उनके शब्दकोश में इजाफा होता है और सबसे महत्वपूर्ण बात कि वे पोडियम पर अपनी बात को व्यवस्थित करके रखना सीखते हैं। मंच पर जाकर माइक पर बोलने में बड़े–बड़ों की हालत खराब हो जाती है लेकिन ये बच्चे निर्भीक होकर अपनी बात कहते हैं। अभिभावक कार्यशाला में भी हमने देखा कि कार्यक्रम समाप्त होने के बाद भी बच्चे देर तक माइक अपने हाथ में लेकर विभिन्न गाने गाते रहे। यानी कि कार्यक्रम समाप्त होने के बाद उनका कार्यक्रम फिर से शुरू हुआ।

पोडियम के बाद बच्चों के नाश्ते का समय होता है। बच्चे फिर से हॉल में इकट्ठे होते हैं और ब्रेकफास्ट करते हैं। इस दौरान बच्चे अपने साथ लाई हुई चीजें शेयर करते हैं। अगर किसी कारण से कोई बच्चा टिफिन लेकर नहीं आ पाया तो बाकी बच्चे ध्यान रखते हैं कि उसे भूखा नहीं रहना पड़े।

नाश्ते के बाद बच्चे अपनी दिन भर की योजना बनाते हैं। पहले यह योजना वे अपनी कॉपी में बनाते थे। क्योंकि उन्हें ठीक से लिखना–पढ़ना नहीं आता था, तो वे योजना बनाते समय शिक्षक की मदद लेते थे। धीरे–धीरे उन्हें कुछ–कुछ पढ़ना–लिखना आ गया तो उन्होंने अपनी योजना सीधे बोर्ड पर ही बनाना शुरू कर दी। वे अपनी इच्छानुसार तय करते हैं कि उन्हें आज किस कक्षा में जाना है। जैसे पहला पीरियड गणित (गणित एवं लॉजिक) का करना है। दूसरा भाषा का (लैंग्वेज एवं इंक्वाइरी), तीसरा पीरियड होगा बाल वैज्ञानिक का, नहीं नहीं आज बाल वैज्ञानिक में जाने का मन नहीं है... आज आर्ट करते हैं। एक बजे खाने का वक्त होता है। फिर चौथा पीरियड तो संगीत के लिए तय है। उसके बाद पांचवें में खेलना है ही। इस तरह बच्चे पूरे दिन की योजना बनाते हैं। अगले दिन हो सकता है कि बच्चों का मन गणित की कक्षा में जाने का नहीं है तो वे उसमें नहीं जाकर जिस कक्षा में उनके जाने का मन होता है उसमें जाते हैं। लेकिन बच्चों के सामने एक अलिखित पक्का नियम सा बन गया है कि जिस कक्षा में नहीं जाने का मन है उसमें वे नहीं जाते, लेकिन अगर उन्होंने एक बार योजना बना ली तो वे उसे पूरे दिन निभाते हैं। अगर कोई बच्चा या बच्चे अपनी योजना का उल्लंघन करते हैं तो अगले दिन बच्चे खुद पोडियम में उसका मुद्दा उठाते हैं। इस तरह बच्चों का टाइमटेबल स्कूल पहले से निर्धारित नहीं करता।

योजना के अनुसार 11 बजे से बच्चों की पढ़ाई शुरू हो जाती है। कक्षा का माहौल भी बिल्कुल जुदा होता है। हरेक कक्षा में विषय के हिसाब से बैठक व्यवस्था होती है, मेज कुर्सी नहीं लगी है। हर कमरे की अपनी व्यवस्था है। बाल वैज्ञानिक रूम में ढेर सारी चीजें जैसे विभिन्न उपकरण, कबाड़ से जुगाड़ का सामान, कील हथौड़ी, कैंचियां, पेपर कटर, माइक्रोस्कोप आदि इस तरह से रखे हैं कि वे बच्चों की पहुंच में हों। बच्चे कक्षा में आने के बाद शिक्षक को घेर कर बैठ जाते हैं। बाल वैज्ञानिक शिक्षक उनके सामने ही कोई मॉडल बनाते हैं। बच्चे उन्हें देखकर सीखते जाते हैं और खुद भी बनाने का प्रयास करते हैं। कुछ बड़े बच्चे अपने मन से भी कुछ चीजें बनाने का प्रयास करते हैं। इसके अलावा बाहर प्रकृति में बच्चों के लिए ज्ञान–विज्ञान की ढेरों बातें सीखने का मौका रहता है। इस तरह खेल–खेल में ही बच्चे ढेर सारी चीजें सीखते रहते हैं।



बचपन में गणित हमें हमेशा डराता था। 13, 17, 19 के पहाड़े आज भी याद नहीं। थोड़ा और बड़े हुए तो पूरी की पूरी प्रमेय रटकर कॉपी पर उतार आते और पूरे नंबर भी ले आते लेकिन आज भी हमें नहीं पता कि प्रमेय का जीवन में क्या उपयोग है। ये अलग बात है कि अपने अनुभवों से ही जाना कि जीवन दो और दो का जोड़ ही नहीं होता। यहां आने पर एक दिन देखा कि बच्चे स्कूल में कुछ खोज रहे हैं। सबके हाथ में पेंसिल और कॉपी भी है। मैंने कौतूहल से पूछा कि तुम सब क्या ढूंढ रहे हो। बच्चों ने बताया कि वे गणित की कक्षा का अभ्यास कर रहे हैं। वे पूरे स्कूल में वृत्त ढूंढ रहे हैं। मैं भी उनके साथ लग गई। हमने चाभी के छल्ले में वृत्त ढूंढा। तो एक बच्चे की नजर पंखा जहां लटका था वहां बने एक वृत्त पर गई। बल्कि उसकी डिजाइन कुछ ऐसी थी कि उसमें कई वृत्त नजर आ रहे थे। उसने जल्दी से वह जगह और वृत्तों की संख्या लिख ली। एक बच्चे ने तो बाहर बने खाद के गड्ढे पर लगे ढक्कन में बने वृत्त को ढूंढ लिया। वृत्त को इस तरह तलाशना और उसके माध्यम से उसको समझना, मेरे लिए कल्पना से परे था। गणित तथा तर्क कक्ष में खेलने की ढेरों ऐसी चीजें हैं जिससे बच्चे खेल–खेल में गणित सीखते हैं। गणित का कहीं कोई भय नहीं। गणित की उनकी शिक्षिका उन बच्चों के साथ लय बनाने के लिए रोज नई–नई विधियां तलाशने की जुगत में हर वक्त जुटी रहती हैं।

इसी तरह आर्ट (रूम फॉर विज़ुअल आर्ट) की कक्षा वह जगह है जहां बच्चे अपनी कल्पना के रंग चित्रों में

उतारने को आजाद होते हैं। उन्हें इस बात की चिंता नहीं होती कि रंगों के बिखर जाने पर उन्हें डांट पड़ेगी या फिर पेपर फट जाने पर उन्हें उसकी भरपाई करनी होगी। इस कक्षा में वे स्वतंत्र होकर अपने को अभिव्यक्ति करते हैं, साथ ही नई–नई विधाओं को भी ढूंढते रहते हैं। आर्ट की कक्षा में बच्चों को इतने रंगों के साथ अंतहीन रंग बिखेरते देखना बहुत सुखद होता है।

खेल भी बच्चे अपनी तरह से खेलते हैं। शुरू में कबड्डी खेलते समय उनकी कोई सीमा रेखा नहीं होती थी। वे दौड़ाते और दौड़ते पूरे स्कूल में चक्कर लगाते थे। उन्हें खेल खिलाने वाले शिक्षक भी उन्हें नहीं टोकते थे। धीरे–धीरे बच्चों को खुद लगा कि इस खेल के कुछ नियम कानून होने चाहिए। फिर उन्होंने शिक्षक की मदद से पाला बनाया और उसके नियम कायदे विकसित किए। इसी तरह बाकी खेलों के साथ भी होता है। पहले बच्चे खेलने के लिए बिल्कुल स्वतंत्र होते हैं। फ़िर उनको खुद ही यह समझ में आता है कि इस खेल के कुछ नियम होने चाहिए।

स्कूल में इस बात का पूरा ख्याल रखा जाता है कि बच्चे अपने आसपास की चीजों से सीखें। इसके लिए शुक्रवार के दिन उनके लिए अलग–अलग तरीके की गतिविधियां की जाती हैं। जैसे किसी फिल्म को देखना, खाना पकाना, बागवानी करना या फिर बाहर घूमने जाना। घूमने जाने में ध्यान रखा जाता है बच्चे प्रकृति के सान्निध्य में आने के साथ–साथ समाज की सामूहिक चीजों से भी परिचित हों। जैसे हाट या सुपर मार्केट। हाल ही में बच्चों ने सामाजिक विज्ञान की कक्षा में यह समझा कि मानव का विकास कैसे हुआ। इत्तफाक से भोपाल ऐसी जगह है जहां आसपास के जंगलों में, पहाड़ियों में हमारे आदिमानव के पदचाप मिलते हैं। भीमबैठिका एक ऐसी ही जगह है जहां हजारों–हजार साल पहले हमारे पूर्वजों द्वारा गुफाओं में की गई चित्रकारी दर्ज है। मानव के विकास पर काफी दिनों तक चली चर्चा के बाद हम सभी भीमबैठिका घूमने गए। बच्चों ने पहली बार सचेतन तौर पर कक्षा के बाहर इतिहास को देखा। यह पूरी प्रक्रिया केवल बच्चों के लिए ही नहीं, इतिहास की विद्यार्थी होने के कारण मेरे लिए भी बहुत ही रोमांचक और मजेदार थी।

भाषा की कक्षा बच्चों के लिए सचमुच मजेदार होती है। इसमें बच्चों को ए फॉर एप्पल या अ से अनार नहीं सिखाया जाता। इसके बजाए बच्चों को ढेर सारी मजेदार कहानियां और कविताएं सुनाई जाती हैं। साथ ही होती हैं इससे संबंधित ढेर सारी गतिविधियां। भाषा कक्ष में बच्चों के आसपास बिखरी रहती हैं ढेर सारी किताबें। बच्चे उन किताबों को छूते हैं, उनमें मौजूद रंग–बिरंगे चित्रों को देखते हैं, उनके पात्रों से दोस्ती करते हैं। इसके बाद कोई किताब कौन सी कहानी कह रही है, यह जानने के लिए बच्चों के मन में पढ़ने की इच्छा जागती है और बच्चे चमत्कार की तरह न जाने कब पढ़ना सीख जाते हैं। एक बार पढ़ना सीख जाने के बाद बच्चों के हाथ से किताब नहीं छूटती। अच्छी तरह पढ़ना सीखने के बाद बच्चों के मन में आता है कि वे भी अपनी कहानी सबको बताएं। कुछ लिखें। धीरे–धीरे बच्चे अपने मन की आवाज को अभिव्यक्ति देने के लिए लिखना भी सीख जाते हैं। हालांकि भाषा सीखने का ऐसा कोई सिद्धांत मुझे पहले से नहीं पता था। लेकिन पिछले एक वर्ष में मैंने अपनी आंखों के सामने घटित होते देखा।



हरेक कक्षा में बच्चों के मन में ढेरों सवाल होते हैं। बच्चे बिना किसी भय के इन सवालों को अपने शिक्षक के सामने रखते हैं। इस तरह कक्षा में बच्चों एवं शिक्षकों के बीच एक ऐसा अटूट रिश्ता बन जाता है जिसमें दोनों एक–दूसरे पर भरोसा करते हैं। उनके बीच भय की कोई जगह नहीं रहती। अगर बच्चों को लगता है कि किसी टॉपिक में उन्हें मजा नहीं आ रहा तो वे निर्भीक होकर अपनी बात कहते हैं। जिससे शिक्षक को भी हर समय यह तलाश करते रहना पड़ता है कि वे किस तरह से अपने टॉपिक की चर्चा करें कि वह हर समय रोचक बना रहे और बच्चे उसका मजा लें। इस तरह, यहां सिर्फ बच्चे ही नहीं सीखते, हर दिन शिक्षक भी सीखते हैं और दोनों के ही सीखने की अनंत संभावनाएं हर वक्त बनी रहती हैं।

चूंकि इस स्कूल में परीक्षा का कोई प्रावधान नहीं है, इसलिए हमें साल भर में बच्चों का एक समग्र मूल्यांकन करना था। स्कूल का मानना है कि साल भर में एक या दो परीक्षाएं लेकर हम बच्चों का सही मूल्यांकन नहीं कर सकते। यहां बच्चों में न तो परीक्षा का खौफ है न ही सबसे अधिक अंक पाने की गलाकाट प्रतियोगिता। यहां बच्चों को पता ही नहीं चलता कि उनका रोज ही आकलन हो रहा है। यह शिक्षकों द्वारा रोज के अवलोकन से होता है, तो पोडियम में उनके द्वारा कही गई बातों के माध्यम से भी होता है। प्रत्येक शिक्षक अपनी डायरी में हरेक बच्चे का ब्यौरा रखता है। इसके अलावा बच्चों के पास भी अपने साथियों का एक आकलन होता है, जिसे वे समय–समय पर व्यक्त करते रहते हैं। साथ ही समय–समय पर अभिभावकों को अपने बच्चे के बारे में एक आकलन भी मिलता रहता है।

हमें इन सारी चीजों को समेटकर हरेक बच्चे का एक सतत समग्र मूल्यांकन तैयार करना था। जाहिर है हमारे पास इसका पहले से कोई अनुभव नहीं था। फिर भी हम सभी ने मिलकर इस श्रमसाध्य काम को करना शुरू किया। एक बार शुरू करने के बाद राह खुद–ब–खुद बनती गई। मार्च के प्रथम सप्ताह तक हमारा काम पूरा हो गया। हरेक बच्चे की अलग फाइल तैयार की गई। उसमें हर बच्चे द्वारा साल भर किए



गए काम से चुनिंदा काम मौजूद थे। इसमें वर्कशीट, बाल वैज्ञानिक रूम में तैयार चीजें और आर्ट व क्राफ्ट की चीजें थीं। इसके अलावा हर बच्चे की एक सीडी तैयार की गई जिसमें साल भर में उनके द्वारा किए गए आडियो–विजुअल काम एवं ढेर सारी तस्वीरें थीं। इसके बाद हरेक बच्चे के अभिभावक के साथ एक विस्तृत चर्चा हुई और उन्हें वह फाइल सौंप दी गई।

इस प्रक्रिया में हमने बहुत कुछ सीखा। साथ ही हमें यह भी अनुभव हुआ कि हमसे बहुत कुछ छूट गया है। आने वाले सत्र के लिए हमने सारे सबक इकट्ठे करके रख लिए।

इस साल बच्चों के अनगिनत सवालों को देखते हुए हमने सामाजिक विज्ञान विषय शुरू किया। उसको नाम दिया गया–इतिहास एवं समाजबोध कक्ष। इसमें बच्चे ब्रह्मांड की उत्पत्ति से लेकर देश दुनिया की तमाम सारी बातों पर चर्चा करते हैं। उनके अनगिनत सवालों के जवाब की तलाश केवल वहीं नहीं करते बल्कि हम वयस्क भी इस चर्चा में काफी समृद्ध होते हैं।

इस बीच एक नई बात यह हुई कि स्कूल में पठन–पाठन की प्रक्रिया में अभिभावक भी जुड़ गए हैं। इसकी शुरुआत इस सोच के साथ हुई कि स्कूल केवल शिक्षक व शिक्षार्थियों का ही नहीं होता। उसे आकार देने में घर और समाज की भी बड़ी भूमिका होनी चाहिए। अतः अब स्कूल की चिंता करने वालों का दायरा काफी बढ़ गया है।

वर्षा : आनंद निकेतन डेमोक्रेटिक स्कूल, भोपाल से संबंद्ध। संगीत सिखाती हैं और सामाजिक विज्ञान पढ़ाती हैं। लेखन में रुचि, विशेषकर कविता। स्कूल से संबंधित कुछ और चित्र आवरण तीन पर देखे जा सकते है। सभी छायाचित्र आनंद निकेतन की वेबसाइट से साभार।